

डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी— पुण्य स्मरण

विगत शनिवार, दिनांक 6 अक्टूबर, 2007 को मैं प्रवास पर था जिस दिन डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवीजी ने महाप्रयाण किया। मुझे इस बात का दुःख रहा कि मैं उनके अंतिम दर्शन नहीं कर सका। जब डॉ. सिंघवी के 'व्यक्ति' के पीछे छिपे 'व्यक्तित्व और कृतित्व' का स्मृति के माध्यम से साक्षात्कार होता है तब व्यथा का यह भाव न्यून हो जाता है। डॉ. सिंघवी जैसे व्यक्तित्व के धनी व्यक्ति का कोई दर्शन अंतिम होता ही नहीं है। वे भौतिक रूप से हमारे बीच रहें या ना रहें किन्तु उनका चिरजीवंत कृतित्व और व्यक्तित्व सदैव-सदैव हमारे बीच बना रहेगा। हमारे सामने रखे उनके चित्र को देखता हूं तो उनके ओंठ राजपाल सिंह की ये पंक्तियां बोलते प्रतीत होते हैं:-

मैं रहूं या न रहूं, मेरा पता रह जाएगा,

डाल पर यदि एक भी पत्ता हरा रह जाएगा।

मेरी उनसे पहली मुलाकात लंदन में लगभग दस वर्ष पूर्व हुई थी। जब वे लंदन में भारतवर्ष के उच्चायुक्त थे और मैं चरखी दादरी के तटपर मध्य आकाश में दो विमानों के टकराने से हुई दुर्घटना से संबंधित विमानों के ब्लैक बॉक्सेज का डी-कोडिंग कराने लंदन स्थित एक प्रयोगशाला में गया था। मैं वहां लगभग पांच दिन रुका। मैंने सोचा कि मैं एक न्यायाधीश होने के नाते, एक सदस्यीय जांच आयोग के अध्यक्ष के रूप में, अधिकारिक यात्रा पर लंदन आया हूं तो मुझे यहां के हमारे उच्चायुक्त से शिष्टाचार भेंट करनी चाहिए। मैं समय लेकर उनके पास गया। जिस आत्मीयता के साथ उन्होंने मेरा और मेरे साथियों का स्वागत किया वह एक स्मरणीय अनुभव है। मेरे साथियों ने उनके कार्यालय में उनका व मेरा चित्र कैमरे में लेना चाहा। श्रीमती लाहोटी मेरे साथ थीं। उन्होंने तुरन्त ही आदरणीया भाभीजी- कमलाजी को आवाज़ देकर बुलवाया और फिर हम चारों का चित्र लिया गया जो एक यादगार पारिवारिक स्मृति बन गया है।

उनके कार्यालय में सामान्य जलपान के उपरांत वे हमें लेकर लंदन के बाजार में गये जहां एक भारतीय रेस्त्रां में उन्होंने हमें अत्यंत सुरुचिपूर्ण भारतीय भोजन कराया। तदनन्तर वे हमें उन प्रमुख स्थानों को दिखाने के लिए ले गए जहां उनके द्वारा प्रसारित भारतीयता की महक अनुभव की जा सकती थी। वे हमारे साथ चलते रहे और अनेक बातें बताते रहे। उन्होंने लंदन में बहुत प्रयास करके और वहां के प्रशासन की अनुमति लेकर, जो सहज और साधारणतया नहीं मिलती है, एक सड़क का नाम महात्मा गांधी के नाम पर रखवाया और चौराहे पर एक वृक्ष लगाकर वहां महात्मा गांधी की मूर्ति भी स्थापित करवाई। लंदन में अनेक महत्त्वपूर्ण स्थानों पर वे महात्मा गांधी की

प्रतिमाएं स्थापित कराने में सफल हुए। सभी स्थान ऐसे हैं जहां उनके द्वारा समारोह पूर्वक स्थापित कराई गई मूर्ति को आदर और श्रद्धा के साथ देखा जाता है। भारत, भारतीयता और भारत की सांस्कृतिक विरासत को लंदन में डॉ. सिंघवी ने जितना प्रचारित-प्रसारित किया और जितना स्थायित्व दिलाया उतना कदाचित ही किसी अन्य ने किया होगा। लंदन में वे भारतवर्ष के समस्त राष्ट्रीय त्योहार जैसे 26 जनवरी, 15 अगस्त, 2 अक्टूबर आदि को उत्सव के रूप में उत्साह के साथ मनाया करते थे। जो कुछ उन्होंने वहां किया उसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि वे न केवल 'भारत के उच्चायुक्त' थे बल्कि शब्द के सही मायनों में वे 'भारतीय उच्चायुक्त' भी थे।

मेरा डॉ. सिंघवी से कोई पूर्व का परिचय नहीं था। मेरे प्रति उनकी आत्मीयता और आदर को देखकर यह स्पष्ट प्रतीत होता था कि भावनाओं की यह अभिव्यक्ति और मेरा सत्कार केवल औपचारिकता मात्र नहीं थी और न वैयक्तिक थी बल्कि जो कुछ उन्होंने किया वह एक वरिष्ठ भारतीय राजनायिक का भारतवर्ष की न्यायपालिका के प्रति सम्मान अभिव्यक्त करने का भाव था।

उनसे हुई इस पहली मुलाकात ने उनके व्यक्तित्व की अमिट छाप मुझ पर छोड़ दी। कुछ व्यक्तित्व इतने परिष्कृत और आकर्षित होते हैं कि—

कुछ लोग होते हैं इतने हसीन कि मिलते ही एक बार,
हो जाते हैं आंखों में जज़्ब और दिल में समा जाते हैं

उनकी झलक आंखों में होती है पर जब आंखों के Tपर पलकों का परदा गिरता है तो वह झलक ओझल नहीं होती है बल्कि कुछ अंदर सरक जाती है और आंखों के रास्ते दिल में उतर जाती है जहां से फिर कभी विदा नहीं होती। हमारी लंदन में हुई पहली मुलाकात शनैः शनैः प्रगाढ़ और प्रगाढ़तर होती गई। वे मुझे अधिक से अधिक चाहने लगे थे और उनकी दिली इच्छा थी कि उनकी सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियों में मैं अधिक से अधिक भाग लूं और उन सभी संस्थाओं से जुड़ जाऊँ जिनसे वे जुड़े हुए थे।

अंग्रेजी भाषा पर उनका पांडित्यपूर्ण अधिकार था किन्तु संस्कृत और हिन्दी की कीमत पर नहीं। हिन्दी और समस्त भाषाओं की जननी संस्कृत का वे उतना ही आदर करते थे जितना कोई अपनी जन्मदात्री माता का करता है। वे 'साहित्य अमृत' नामक उत्कृष्ट पत्रिका का संपादन करते थे और संपादकीय स्वयं ही लिखते थे। बहुधा इन संपादकीयों में सम सामयिक विषयों अथवा तत्कालीन ज्वलंत समस्याओं पर उनके चिन्तन की अभिव्यक्ति होती थी। लगभग एक मास पूर्व मुझे उनके हस्त

लिखित पत्र के साथ एक पुस्तक— ‘पुनश्च’ प्राप्त हुई थी जिसमें ‘साहित्य अमृत’ में लिखे गए उनके तमाम संपादकीयों का संकलन है। यह पुस्तक विषयों की विस्तृत विविधा पर भिन्न-भिन्न समय पर लिखे गए एक ही विद्वान के सुन्दर निबंधों का संग्रह है। पुस्तक हाथ में आते ही मैंने सबसे पहले पढ़ना चाहा इस पुस्तक का संपादकीय। यह जानने के लिए कि संपादकीयों के इस संग्रह का संपादकीय क्या कहता है? संभवतः यह दिनांक 15 या 16 सितम्बर की घटना है। सच कहूं तो यह संपादकीय पढ़ते-पढ़ते, रेखाओं के बीच यह संदेश मुझे पढ़ने में आ गया था कि वह दिन अब दूर नहीं जिस दिन वह घटना घटित होगी जो प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में घटनी अवश्यंभावी है। दीपावली ही उनका जन्मदिन होता है। आगामी दीपावली और उनके जन्मदिन में कुछ ही दिन शेष बचे हैं किन्तु इस पुस्तक के विमोचन के लिए जो दिन कदाचित बहुत उपयुक्त होता उसकी उन्होंने प्रतीक्षा नहीं की। संपादकीय में उनके मनोभाव पढ़ते-पढ़ते एक भय की कालिमा दृष्टिगोचर होने लगी थी। वह अशुभ कल्पना सच हो गई—

जिसका डर था वही बात हुई,

उनसे वह मुलाकात आखिरी साबित हुई।

अपने यशस्वी जीवन में अपनी धर्मपत्नी के योगदान की मुक्त प्रशंसा करते हुए उन्होंने यह संकेत दे दिया कि भरे-पूरे घट के छलकने का समय अब निकट है। यह लग गया था कि आगामी दीपावली और जन्मदिवस के अवसर पर वे हमारी बधाई और शुभकामनाएं सांसारिक पद्धति से स्वीकार करने के लिए उपलब्ध नहीं होंगे; यह आदान-प्रदान हमें आध्यात्मिक धरातल पर ही करना होगा।

डॉ. सिंघवी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के संविधानवेत्ता थे। भारतवर्ष को स्वतंत्रता प्राप्त हो जाने पर जब भारतीय संविधान का प्रारूप अंग्रेजी भाषा में तैयार हुआ और साथ ही उसका अधिकृत हिन्दी पाठ भी, तब डॉ. सिंघवी ने देखा कि संविधान की उद्देशिका में अंग्रेजी के शब्द ‘सेक्युलरिज्म’ के लिए हिन्दी में ‘धर्म निरपेक्ष’ शब्द का प्रयोग किया गया है। डॉ. सिंघवी ने पंडित जवाहरलाल नेहरू से मिलकर कहा कि यह अनुवाद सही नहीं है; ‘सेक्युलरिज्म’ के लिए हिन्दी में ‘धर्मनिरपेक्ष’ के स्थान पर ‘पंथनिरपेक्ष’ शब्द का प्रयोग होना चाहिए अन्यथा संविधान की आत्मा आहत होगी। जवाहरलालजी डॉ. सिंघवी का सम्मान करते थे। उन्होंने कहा कि आप कहते हैं तो मान लेता हूं, आप संशोधन कर दीजिए। डॉ. सिंघवी ने अपनी कलम से ‘धर्मनिरपेक्ष’ काटकर उसके स्थान पर ‘पंथनिरपेक्ष’ लिख दिया। इस ऐतिहासिक दस्तावेज़ में डॉ. सिंघवी द्वारा किया गया यह संशोधन एक ऐतिहासिक घटना है। ‘धर्मनिरपेक्ष’ के स्थान पर ‘पंथनिरपेक्ष’ लिखने के निहितार्थ को खोजा

जाए और समझा जाए तो आज हो रहे अनेक विवादों का पटाक्षेप हो सकता है। उच्चतम न्यायालय में मेरे समक्ष वे केवल एक बार अभिभाषक की हैसियत से प्रस्तुत हुए थे। एक प्रकरण था जिसमें जटिल संवैधानिक प्रश्न विचारार्थ उत्पन्न हुए थे जिनसे दूरगामी परिणाम होने थे। मैं सात सदस्यीय पीठ की अध्यक्षता कर रहा था। डॉ. सिंघवी ने अपने तर्कों में मौलिक अधिकार, मौलिक कर्तव्य, नीति निर्देशक तत्व और इनसे जुड़े हुए अनेक जटिल प्रश्नों की अति सुंदर और सटीक व्याख्या की। सात सदस्यीय पीठ ने अपने निर्णय के द्वारा उच्चतम न्यायालय के कम से कम पांच अन्य ऐसे निर्णयों को पलटा जो 1958 से 2002 तक प्रभावशील रहे थे। संवैधानिक विचारप्रवाह को इतना गंभीर मोड़ दिलाने का श्रेय डॉ. सिंघवी के संवैधानिक ज्ञान और बुद्धिमत्ता को जाता है। कदाचित, वह अंतिम प्रकरण था जिसमें डॉ. सिंघवी अभिभाषक के रूप में न्यायालय में प्रस्तुत हुए थे।

डॉ. सिंघवी विलक्षण प्रतिभा, जो विपुल भी थी और बहुमुखी भी, के धनी थे। वर्षों से हम सुनते आ रहे हैं कि सफलता के मार्ग का एक सूत्र है— 'One thing at a time and that done well।' डॉ. सिंघवी इस नियम का अपवाद थे। उनकी जीवनगाथा प्रमाणित करती है—'So many thing at a time and all done well' भी संभव है। वे विद्वान थे, राजनीतिज्ञ थे, कूटनीतिज्ञ थे, किन्तु इन सबसे बढ़कर केवल नीतिज्ञ थे। सुनीति, सदाचार और सद्व्यवहार— इन सबसे उनका व्यक्तित्व इतना संपन्न था कि मिलते ही इस सब का अहसास हो जाता था। पद्मश्री से लेकर अनेक सम्मान उन्हें मिले और यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि जब भी उनका अभिनन्दन होता था और उन्हें कोई सम्मान मिलता था तो न केवल वे सम्मानित होते थे, बल्कि उस सम्मान का सम्मान भी बढ़ जाता था जो प्राप्त करना वे स्वीकार करते थे।

नारी के सम्मान की चर्चा बहुत होती है किन्तु कितने लोग हैं जो अपने व्यवहार और आचरण में नारी का सम्मान करते हैं। उनकी धर्मपत्नी कमलाजी उनके साथ उनकी परछाई की तरह रहती थीं और जब वे उन्हें अत्यंत आत्मीयता, आतुरता और आदर के साथ 'कमलाजी' कहकर संबोधित करते थे तो लगता था कि वे अपनी पत्नी को नहीं, किसी नारी मात्र को नहीं बल्कि किसी देवी को संबोधित कर रहे हैं।

समय की सीमा है। उनके व्यक्तित्व और उपलब्धियों के प्रत्येक पहलू को सीमित समय में छू सकना भी संभव नहीं है। इतना ही कहकर अपनी वाणी को विराम दूंगा कि वे एक Self-made person थे। उन्होंने कभी झुकना नहीं सीखा। सिद्धांतों पर वे अडिग रहे, कभी समझौता नहीं किया। इसीलिए वे सदैव उठते ही गये। क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा— इन पंच महाभूतों में उनकी

देह का विलीन हो जाना विश्व की मानवता के लिए क्षति है, भारतवर्ष के लिए अपूर्णीय क्षति है और उनके परिवार और स्नेहीजनों के लिए एक ईंदय विदारक आघात है। उन जैसे इंसानों की आज बहुत आवश्यकता है क्यों कि—

फरिश्ते से बेहतर है इंसान बनना
मगर इसमें पड़ती है मिहनत ज़ियादा।

उन्हें प्रणाम और हृदय के अंतरतम से भावपूरित श्रद्धांजली।

नोट: स्वर्गीय डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी, जिनका शनिवार दिनांक 06.10.2007 को चिरगमन हुआ की स्मृति में दिनांक 10.10.2007 को मध्याह्न 5 बजे आयोजित शोक सभा में माननीय श्री रमेश चन्द्र लाहोटी, पूर्व प्रधान न्यायाधीश भारतवर्ष द्वारा व्यक्त श्रद्धांजली।